NEXT IAS

दैनिक संपादकीय विश्लेषण

विषय

न्यायालयों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करनी चाहिए, उसका नियमन नहीं करना चाहिए

www.nextias.com

न्यायालयों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करनी चाहिए, उसका नियमन नहीं करना चाहिए

संदर्भ

- **रणवीर अल्लाबादिया बनाम भारत संघ (2025)** मामले में सर्वोच्च न्यायालय के हालिया अवलोकनों में, जहाँ न्यायालय ने ऑनलाइन सामग्री के लिए नए नियामक तंत्र बनाने का सुझाव दिया, एक महत्वपूर्ण संवैधानिक परिचर्चा को पुनर्जीवित किया है: क्या न्यायालयों को केवल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करनी चाहिए, या वे वैध रूप से इसके नियमन को आकार दे सकते हैं?

लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को समझना

- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एक मौलिक सिद्धांत है जो व्यक्तियों या समुदायों को अपनी राय, विचार और विश्वास व्यक्त करने की अनुमति देता है, बिना सरकार की प्रतिशोध, सेंसरशिप या कानूनी दंड के भय के।
- इसे सार्वभौमिक रूप से एक मूल मानव अधिकार के रूप में मान्यता प्राप्त है, जिसे **मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (UDHR, अनुच्छेद 19)** जैसे दस्तावेज़ों द्वारा संरक्षित किया गया है।

संवैधानिक दुविधा: अनुच्छेद 19(2) और प्रतिबंधों की सीमाएँ

- संविधान का अनुच्छेद 19(1)(a) अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मौलिक अधिकार के रूप में सुनिश्चित करता है।
- भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पूर्ण नहीं है; यह अनुच्छेद 19(2) के अंतर्गत "उचित प्रतिबंधों" के अधीन है।
  - **ये प्रतिबंध विशिष्ट और संपूर्ण हैं:** भारत की संप्रभुता और अखंडता, राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध, सार्वजनिक व्यवस्था, शालीनता या नैतिकता, न्यायालय की अवमानना, मानहानि, एवं अपराध के लिए उकसाना।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नियमन में न्यायपालिका की भूमिका

- **संवैधानिक संरक्षक के रूप में न्यायपालिका:** न्यायालय अनुच्छेद 19(1)(a) और उसके अनुमेय सीमाओं की व्याख्या करके अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करते हैं।
  - न्यायालय सुनिश्चित करते हैं कि राज्य नियामक शक्तियों का उपयोग असहमति या राजनीतिक आलोचना को दमन करने के लिए न करे।
- **सिद्धांतगत योगदान:** सर्वोच्च न्यायालय ने **अनुपातिकता** और **चिलिंग इफ़ेक्ट** जैसे सिद्धांत विकसित किए हैं ताकि अभिव्यक्ति पर प्रतिबंधों के प्रभाव का आकलन किया जा सके।
  - ये सिद्धांत वैध नियमन और असंवैधानिक दमन के बीच अंतर करने में सहायता करते हैं।
- **शक्तियों का पृथक्करण:** कानून निर्माण और नीति निर्माण विधायिका एवं कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र में है, जबकि न्यायालय केवल व्याख्या और समीक्षा तक सीमित हैं।

भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नियमन से उत्पन्न चुनौतियाँ

- दंडात्मक कानूनों के माध्यम से अभिव्यक्ति का अपराधीकरण एक बड़ी चुनौती बनी हुई है, क्योंकि राजद्रोह, शत्रुता, अश्लीलता और मानहानि पर प्रावधान प्रायः पत्रकारों एवं आलोचकों के विरुद्ध लागू किए जाते हैं, न्यायिक संकुचन के बावजूद।

- "सार्वजनिक व्यवस्था", "नैतिकता" और "आपत्तिजनक सामग्री" जैसे अस्पष्ट वैधानिक शब्द कार्यपालिका को व्यापक विवेकाधिकार प्रदान करते हैं, जिससे असहमति का मनमाना एवं चयनात्मक दमन संभव होता है।
- बार-बार इंटरनेट शटडाउन अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं, समाचार प्रवाह, राजनीतिक संचार और पत्रकारिता कार्य को बाधित करते हैं।
- **आईटी अधिनियम और आईटी नियम, 2021** के अंतर्गत डिजिटल अभिव्यक्ति का नियमन मध्यस्थों पर भारी अनुपालन भार डालता है और स्वतंत्र निगरानी के बिना अपारदर्शी सामग्री हटाने की अनुमति देता है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नियमन में कानूनी ढाँचे

- भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का नियमन संवैधानिक प्रावधानों, आपराधिक कानून और क्षेत्र-विशिष्ट विनियमों में फैला हुआ है। प्रमुख तत्वों में शामिल हैं:
  - **संविधान:** अनुच्छेद 19(1)(a) और अनुच्छेद 19(2); अनुच्छेद 14 एवं 21 के अंतर्गत संबंधित अधिकार जो निष्पक्षता तथा उचित प्रक्रिया को नियंत्रित करते हैं।
  - **दंड विधान:** भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 124A, 153A, 295A, 499, 505 (अब **भारतीय न्याय संहिता** में पुनः अधिनियमित) जो राजद्रोह जैसे अपराध, शत्रुता को बढ़ावा देना, धर्म का अपमान, मानहानि और सार्वजनिक उपद्रव से संबंधित हैं।
  - **आईटी ढाँचा:** सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 (धारा 69A के अंतर्गत अवरोध सहित) और आईटी (मध्यस्थ दिशानिर्देश एवं डिजिटल मीडिया आचार संहिता) नियम, 2021।
  - **मीडिया-विशिष्ट मानदंड:** केबल टीवी और सिनेमैटोग्राफ कानून, कार्यक्रम एवं विज्ञापन संहिता, तथा प्रिंट, टीवी तथा डिजिटल समाचार मीडिया के लिए स्व-नियामक दिशानिर्देश।

न्यायिक मिसाल

- **कॉमन कॉज़ बनाम भारत संघ (2008):** न्यायालय ने रेखांकित किया कि शक्तियों का पृथक्करण न्यायालयों को प्रत्येक शासन समस्या को न्यायिक आदेशों और तदर्थ नीति निर्देशों से हल करने से रोकता है, विशेषकर उन क्षेत्रों में जिन्हें विधायिका या विशेषज्ञ नियामकों द्वारा बेहतर तरीके से संभाला जा सकता है।
- **सहारा इंडिया रियल एस्टेट कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम SEBI (2012):** न्यायालय ने निष्पक्ष सुनवाई की रक्षा के लिए स्थगन आदेशों को मान्यता दी, लेकिन मीडिया पर व्यापक पूर्व-नियंत्रण के विरुद्ध चेतावनी दी और बल दिया कि रिपोर्टिंग पर कोई भी रोक संकीर्ण रूप से तैयार की गई, अस्थायी और अपवादस्वरूप होनी चाहिए।
- **कौशल किशोर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2023):** एक संविधान पीठ ने माना कि अनुच्छेद 19(2) में दिए गए आधार संपूर्ण हैं और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कोई अतिरिक्त प्रतिबंध अन्य मौलिक अधिकारों या "संवैधानिक नैतिकता" जैसी अस्पष्ट अवधारणाओं का रचनात्मक रूप से आह्वान करके नहीं लगाया जा सकता।

वैश्विक दृष्टिकोण: सामग्री नियमन

- वैश्विक दृष्टिकोण से, **यूरोपीय संघ, जर्मनी, यूनाइटेड किंगडम और ऑस्ट्रेलिया** जैसे लोकतांत्रिक क्षेत्र मुख्यतः प्रकाशन के बाद सामग्री हटाने एवं प्लेटफ़ॉर्म अनुपालन न करने पर दंड पर निर्भर करते हैं, जिन्हें कानूनी सुरक्षा और न्यायिक निगरानी का समर्थन प्राप्त होता है।

- इसके विपरीत, **चीन और रूस** जैसे अधिनायकवादी शासन कठोर सामग्री कानून लागू करते हैं, जिनकी विशेषता पूर्व-सेंसरशिप, व्यापक निगरानी एवं असहमति का अपराधीकरण है।
  - यह अंतर इस जोखिम को रेखांकित करता है कि अत्यधिक या निवारक सामग्री नियमन धीरे-धीरे लोकतांत्रिक स्वतंत्रताओं को क्षीण कर सकता है।

आगे की राह

- **विधायी प्रक्रिया, न्यायिक आदेश नहीं:** कोई भी नया नियमन संसद से व्यापक कानून (जैसे प्रस्तावित डिजिटल इंडिया अधिनियम) के माध्यम से आना चाहिए, जो व्यापक जन परामर्श के बाद हो, न कि तदर्थ न्यायालय आदेशों के माध्यम से।
- **सह-नियमन:** आदर्श मॉडल स्व-नियामक निकायों (जैसे डिजिटल पब्लिशर कंटेंट ग्रिवेन्सेस काउंसिल) के लिए वैधानिक समर्थन है, जिसे केवल अपीलीय स्तर पर न्यायिक (न कि कार्यकारी) प्राधिकरण द्वारा देखा जाए।
- **डिजिटल साक्षरता:** "आपत्तिजनक" सामग्री के विरुद्ध दीर्घकालिक रक्षा फ़ायरवॉल नहीं, बल्कि विवेकशील नागरिकता है। डिजिटल मीडिया साक्षरता में निवेश सेंसरशिप की तुलना में अधिक प्रभावी है।
- **न्यायिक संयम:** सर्वोच्च न्यायालय को संवैधानिक पंच की अपनी भूमिका में लौटना चाहिए। जैसा कि **पंडित ठाकुर दास भार्गव** ने संविधान सभा में कहा था, न्यायालय का कार्य यह कहना है कि कोई प्रतिबंध उचित है या नहीं, न कि यह माँग करना कि प्रतिबंध लगाए जाएँ।

Source: TH

दैनिक मुख्य परीक्षा अभ्यास प्रश्न

प्रश्न: अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के न्यायालय-प्रेरित नियमन से जुड़े संवैधानिक और लोकतांत्रिक जोखिमों की जाँच कीजिए, विशेषकर डिजिटल क्षेत्र में।

■■■■